ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 299-302**

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

पूर्व प्रेमचंद युगीन हिन्दी उपन्यासों में समसामयिक यथार्थ चित्रण

1. रविकान्त
2. प्रोफेसर गुरु चरण सिंह

1. शोध अध्येता– हिन्दी विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, 2. शोध निर्देशक– प्राचार्य, शांति प्रसाद जैन महाविद्यालय, सासाराम (बिहार) भारत

Received-16.03.2023, Revised-23.03.2023, Accepted-28.03.2023 **E-mail: ravikant8831@gmail.com**

सारांशः ***यथार्थवाद ऐसी विचारधारा है जो उस वस्तु एवं भौतिक जगत को सत्य मानती है, जिसका हम ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं। पशु–पक्षी मानव, जल–थल, आकाश इत्यादि सभी वस्तुओं का हम प्रत्यक्षीकरण कर सकते हैं। यथार्थवाद संसार को जैसा है, वैसा ही स्वीकार करता है।***

पदार्थ जगत का यथार्थ बोध, तथा उसके जीवन्त अनुभूति का वास्तविक चित्रण यथार्थवाद है, और यही उपन्यास की सफलता का मापदंड है। कथा साहित्य के दो भेद–कथा या कहानी और उपन्यास होते हैं। कहानी पूर्णतया काल्पनिक भी हो सकती है पर उपन्यास यथार्थ के धरातल पर अवस्थित होता है और यदि उसमें थोड़ी बहुत कल्पना होती है तो वह मजबूती देने के लिए ही होती है। श्री गोपाल राय कहते हैं अनेक आलोचकों ने इस यथार्थवादी आग्रह को उपन्यास का प्रभेदक तत्व माना है इस प्रकार यथार्थवाद ही उपन्यास का प्राण अथवा जनक है

कुंजीभूत शब्द– विचारधारा, भौतिक जगत, ज्ञानेन्द्रियों, जल–थल, प्रत्यक्षीकरण, यथार्थवाद, यथार्थ बोध, जीवन्त अनुभूति ।

पूर्व प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में यथार्थ बौद्ध (1850–1915)– यूरोप में 17वीं शताब्दी के पूर्वही उपन्यास विधा का जन्म हो चुका था, पर भारत में इसका जन्म 19वीं शताब्दी के प्रायः मध्यकाल में हुआ। श्री गोपाल राय कहते हैं कि देवरानी जेठानी (1870) की कहानी स्त्री शिक्षा के निमित्त पाठ्य–पुस्तक के रूप में ही रचित एक कथा पुस्तक थी। चूंकि यह हिन्दी की पहली मौलिक कल्पना प्रस्तुत कथा–पुस्तक थी, और इसमें समकालीन नारी की सामाजिक पारिवारिक स्थिति ही लेखक के चिंता का विषय थी, यह अनायास ही उपन्यास के बहुत निकट पहुंच गयी। अतः देवरानी जेठानी की कहानी को ही हिंदी उपन्यास का प्रस्थान–बिंदु मानना समीचीन है।

यहां इस तथ्य पर भी ध्यान देना प्रासंगिक है कि हिंदी का प्रथम उपन्यास कौन है, इस विषय पर विद्वानों में मतभेद रहा है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लाला श्रीनिवास दास कृत परीक्षा गुरु (1882) को तथा विजय शंकर मल्ल ने श्रद्धा राम फिल्लौरी कृत भाग्यवती (1877) को हिंदी साहित्य का पहला उपन्यास माना था। इस विषय में अंतिम मत गोपाल राय का है जो देवरानी जेठानी (1870ई0) को हिन्दी का प्रथम उपन्यास मानते हैं।

इंशा अल्लाह की रानी केतकी की कहानी (1803) के पश्चात् सदी के सातवें दशक के अंतिम दौर (1870) में प्रकाशित पंडित गौरीदत्त कृत देवरानी–जेठानी की कहानी वस्तुतः कहानी से उपन्यास की ओर एक छलांग है। आश्चर्य की बात तो यह है कि इनके बीच 70 साल के अंतराल में अन्य कोई मौलिक कथा पुस्तक नहीं लिखी गई। इस उपन्यास में पहली बार परम्परा से हटकर एक नए तरीके से कथा को प्रस्तुत किया गया। रानी की कहानी होने कारण 'रानी केतकी की कहानी' उस पुरानी परम्परा के अनुसरण करती है, जिसमें कथाकार किसी राजा, रानी, सामन्त या शूरवीर या सेठ की कहानी कहता था। देवरानी जेठानी कहानी उस लीक से हटकर यथार्थ पर आधारित सामान्य परिवार की स्त्रियों सुखदेई और ज्ञानों की कहानी है।

देवरानी जेठानी उपन्यास की भूमिका में लिखा है–"इस पुस्तक में स्त्रियों की बोलचाल और वही शब्द जहां जैसा आशय है लिखे हैं और यह बोली है, जो इस जिले के बनियों के कुटुम्ब में स्त्री–पुरुष या लड़के वाले बोलते चलते हैं..... ..... इस पुस्तक में यह भी लिखा है कि इस देश की बनिये जन्म, मरण, विवाह आदि में क्या–क्या करते हैं, पढ़ी और अनपढ़ स्त्रियों में क्या–क्या अन्तर है,बालकों का पालन–पोषण किस प्रकार होता है और क्यों होना उचित है, अनपढ़ स्त्रियां जब एक काम को करती हैं, उसमें उन्हें क्या–क्या हानि होती है और पढ़ी हुई जब उसी काम को करती है तो उससे क्या–क्या लाभ होता है? स्त्रियों की वह बातें जो अभी तक नहीं लिखी गयी हैं मैंने खोजकर सब लिख दी है और इस पुस्तक में ठीक–ठीक वही लिखा है।

गोपाल राय कहते हैं "इस उद्धरण की अंतिम पंक्ति यथार्थवाद से युक्त है जो उपन्यास की पहचान है। तत्कालीन बनिया समाज के सांस्तिक और पारिवारिक स्थिति उसके आचार विचार, पर्व, त्योहार, रीति–रिवाज, जन्म,विवाह और मृत्यु सम्बन्धित संस्कार तथा घरेलू जीवनचर्या का इस कथा में प्रमाणिक विवरण उपलब्ध है। देवरानी जेठानी की कहानी के पश्चात लगभग इसी आधार पर कथा पुस्तकों के लिखने की रीति प्रारंभ हुई और क्रमषः ईश्वरी प्रसाद एवं कल्याण राय ने वामा शिक्षक (1872) श्रद्धाराम फिल्लौरी ने भाग्यवती (1877) राधा.ष्णदास ने निस्सहाय हिंदू (1881) प्रकाषन वर्श–1890 तथा लाला श्रीनिवास दास ने परीक्षा गुरू (1822) कथा ग्रन्थ लिखे।

गोपाल राय वामा शिक्षक को 'देवरानी–जेठानी' की कहानी की अनुकृति और उसी का विकसित रूप मानते हैं ।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

उनके अनुसार "पात्रों और स्थानों की नवीनता तथा नारी आदर्ष सम्बन्धित कुछ उदाहरणों के अतिरिक्त इसमें और कोई नवीनता नहीं है इसमें भी एक सीधी–सरल वार्तालाप द्वारा स्त्री–शिक्षा के होने वाले लाभों को दर्शाना ही इस कथा का उद्देश्य है। एक युगानुरूप आदर्श स्त्री के जितने भी गुण हो सकते हैं–"यथा शिक्षित होना, बड़ों का सम्मान करना, घर का समुचित प्रबंध करना, स्वावलम्बी,बनना, छोटों से स्नेह करना, बच्चों का उचित का ढंग से पालन पोषण करना आदि उनका उदाहरण सहित वर्णन किया गया है। आदर्श स्त्री के जो भी गुण उस काल की कसौटी पर मान्य थे, वे मथुरा दास की बहू और उसकी पुत्रियों में और जो भी संभव दुर्गुण हो सकते थे, वे जमुनादास की स्त्री और उसकी लड़कियों में भर दिए गए हैं। वामा षिक्षक की भाषा और स्थानों के नामकरण में यथार्थ का पूरा रंग है, जो देवरानी–जेठानी की कहानी का स्मरण दिलाता है।

समसामयिक जीवन के यथार्थ चित्रण की बात की जाए जिसे यथार्थ बोध का सही मापदंड माना गया है, गोपाल राय कहते हैं,"वामा शिक्षक" की कथा समकालीन जीवन के बिल्कुल निकट ही है। लाला भगवानदास उनके दो पुत्रों और चार बहुओं की कथा को एक सूत्र में बांधने में लेखकद्वय पूरी तरह से सफल है.....। पूरी कथा एक परिवार से जुड़ी होने के कारण सुगठित है, पर कथा को परिच्छेदों या अध्यायों में विभक्त करने का ज्ञान कथाकार द्वय को ज्ञात नहीं है। गंगा की कथा समाप्त होने पर कथाकार बारी–बारी से राधा, किशोरी तथा पार्वती की कथाएं कहता है और उनके लिए 'राधा का हाल','किशोरी का हाल','पार्वती का हाल' आदि षीर्शक भी देता है । इस प्रकार कथा शिल्प की .ष्टि से वामा शिक्षक में थोड़ी सी नवीनता दिखाई पड़ती है।

श्रद्धाराम फिल्लौरी की भाग्यवती (1877) में भी तत्कालीन समसामयिक समाज के यथार्थ, यथा " बाल–विवाह, भूतप्रेत और ओझा–सयानों में विश्वास बच्चों को टीका न लगवाने, उन्हें जेवर पहनाने, लड़कियों को शिक्षा न देने, शादी–ब्याह के अवसर पर अपव्यय करने, एलोपैथी डॉक्टरों से इलाज न कराने जैसी हिंदू समाज की बुराइयों का चित्रण करने के साथ ही उसकी आलोचना भी की गई है और समाज में प्रचलित बहुविध अंधविश्वासों का विरोध करते हुए लोगों को सचेत किया गया है, कि वे उनमें न फंसें। उपन्यास में विधवा–विवाह का समर्थन और बाल–विवाह का विरोध भी किया गया है।इन विरोधियों और समर्थनों के साथ ही उपन्यास में नवजागरण में अनेक पक्ष प्रस्तुत किए गए हैं, जिन पर तत्कालीन आर्य समाज की प्रगतिशील सामाजिक, धार्मिक आंदोलन का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

निस्सहाय हिंदू में भी पूर्ववर्ती कथा ग्रन्थों की तरह ही पुनर्जागरण का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसमें तत्कालीन समसामयिक सामाजिक यथार्थ के साथ ही साथ आदर्षोन्मुख यथार्थ का भी सफल चित्रण हुआ है। 1857 की क्रांति, जिसे भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम माना गया है, में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच अद्भुत एकता स्थापित हो गई थी। इस क्रान्ति की विफलता के पश्चात् अंग्रेज शासकों में इन दोनों वर्गों में धार्मिक भावना भड़का कर फूट डालने का प्रयास किया था। संभवत इसके फलस्वरूप कट्टरपंथी मुसलमान खुले आम, और कभी–कभी घोशणा करके भी गोकषी करते थे। जैसा कि गोपाल राव लिखते हैं,"उपन्यास में मुसलमानों का एक कट्टरपंथी वर्ग का नेता अभिजात वर्गीय अताउल्लाह है, बकरीद के अवसर पर गोकशी का समर्थन करता है औरइसके लिए मुसलमानों को उत्तेजित करता है।" आश्चर्य की बात है कि इसमें एक मुसलमान पात्र, मौलवी, अब्दुल अजीज, गोवध को रोकने के लिए प्रयत्न करता है और इस प्रयत्न में अपनी जान तक दे देता हैं।गौरक्षा के उद्देश्य में एक 'गोहितकारिणी सभा' की स्थापना होती है जिसका सभापति अब्दुल अजीज चुना जाता है। वह खुली सभा में घोशणा करता है कि कुरान शरीफ में गोकषी वर्जित है। स्पश्ट है कि यहां आदर्षोन्मुख यथार्थवाद का दर्शन होता है।

गोपाल राय के अनुसार "काव्य शिल्प दोनों की .ष्टियों से 'निस्हाय हिंदू' में अद्भुत नवीनता है। इसमें ..... समकालीन राष्ट्रीय भावना और नव–जगरण की चेतना भी उजागर हुई है। यह हिंदी का पहला उपन्यास है जिसमें मुस्लिम समाज को भी दर्शाया गया है।"चरित्र निर्माण की दृष्टि से भी निस्हाय हिन्दू समकालीन और पूर्ववर्ती कथा रचनाओं से अग्रसर है।" "उपन्यास में नियोजित 'दो पुरनियों' की बातचीत से अवध मिश्रित और 'साव जी' जी की भाषा में भोजपुरी मिश्रित खड़ी बोली, गुंडों की खास बनारसी लहजे पर खड़ी बोली, अंग्रेजों की अंग्रेजी उच्चारण वाली हिन्दी मोहल्ले –मोहल्ले मुख्तर की खांटी भोजपुरी, सिपाहियों की भोजपुरिया हिन्दी और मुसलमान पात्रों की आसान किस्म की उर्दूके प्रयोग से उपन्यास की भाषा में सर्जनात्मक वैविध्य की पुष्टि की गई है, पर कथा के मुख्य पात्र परिनिष्ठित हिन्दी का ही प्रयोग करते हैं।" इस प्रकार निस्हाय हिन्दू की भाषा ..... उपन्यास की प्रकृति के अनुरूप है।

लाला श्रीनिवास दास द्वारा लिखित परीक्षा गुरु 1882 में कल्पित पात्रों के माध्यम से तत्युगीन सामाजिक यथार्थ का सफल चित्रण किया गया है। लेखक इस ग्रंथ की घोषणा 'नई चाल की पुस्तक' के रूप में करता है, पर इसके पूर्व से कथाकारों– गौरीदत्त, ईश्वरी प्रसाद, कल्याणराम श्रद्धाराम फिल्लौरी आदि ने भी अपनी–अपनी पुस्तक के लिए इसी प्रकार की घोषणा की थी, फिर भी लाला श्रीनिवास दास के परीक्षा गुरु में सचमुच एक नया कथा शिल्प मिलता है जो पूर्ववर्ती कथा–पुस्तकों में नहीं है। गोपाल राय की दृष्टि में "कथ्य की दृष्टि से परीक्षा गुरु देवरानी–जेठानी की कहानी, वामा शिक्षक,

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

भाग्यवती आदि की परम्परा में होते हुए भी राष्ट्रीय परिवेश से अधिक जुड़ा हुआ उपन्यास है।

गोपाल राय कहते हैं,"परीक्षा गुरु में दिल्ली के एक कल्पित रईस साहूकार मदन मोहन के अंग्रेजी सभ्यता की नकल, अपव्यय, व्यवसायिकअसजगता, खुशामदी दोस्तों की कपटपूर्ण बातों आदि के कारण बिगड़ने तथा दिवालिया होने की हद तक पहुंचने और अपनी पतिव्रता पत्नी और एक सच्चे मित्रकी सहायता से सुधरने और अपनी पूर्व स्थिति में आने का चित्रण किया गया है। वह मित्र थे लाला ब्रजकिशोर। एक आदर्श व्यक्तित्व के धनी, पेशे से वकील, किन्तु झूठे मुकदमे ना लेने वाले,अन्याय पीड़ित गरीबों के मुकदमे निःशुल्क लड़ने वाले और बातचीत की सच्ची सावधानी, परोपकार, ईश्वर –भक्ति, न्यायपरता, विचारशक्ति, गृहस्थ के लिए मध्यम मार्ग के अनुसरण, धर्मप्रेरित व्यवहार, बुद्धि, विवेकपूर्ण परोपकार, प्रबन्ध–निपुणता,स्वाभाविक सज्जनता आदि का उपदेश देने वाले। इनके अतिरिक्त उपन्यास में अन्य गौण यात्र भी हैं जो विश्वसनीय रूप से समकालीन समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं।

परीक्षा गुरू में यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से कहीं भी ब्रिटिश शासनकी आलोचना नहीं की गई है, तथापि कथावस्तु के वर्णन में उसके प्रति लेखक की आलोचनात्मक दृश्टि उजागर होती है। उपन्यास में संवाद–योजना का भरपूर प्रयोग किया गया है, यद्यपि कलात्मक दृश्टि से इसे उच्च कोटि का नहीं माना गया। सरल दैनिक बोल–चाल की आडम्बर रहित भाषा प्रयुक्त हुई है, जिससे भाषा के प्रति यथार्थवादी आग्रह स्पष्ट है।

उपन्यास के अंत में लेखक में कहता है "जो बात सौ बार समझाने से समझ में नहीं आती है वह एक बार की परीक्षा से भली–भांति मन में बैठ जाती है और इसी वास्ते लोग परीक्षा को गुरु मानते हैं।" यह वाक्य नाटक के भरतवाक्य जैसा है और पुरानी कथाओं का अंत भी प्रायः इसी प्रकार के वाक्यों से होता था किन्तु भावी उपन्यास इस रूढ़ि का पूर्णतः परित्याग कर चुके हैं।

परीक्षा गुरु के पश्चात और बाबू देवकीनन्दन खत्री की चन्द्रकान्ता के पहले जो कथा–पुस्तकें लिखी गई है, प्रकाशित हुई, इसमें बालकृष्ण का नूतन ब्रह्मचारी (1868) तथा (1879–82) और केशवराय की 'सुन्दर'(1880) प्रमुख है। राधाकृश्णदास के 'निस्सहाय हिन्दू' की रचना तो 1881 में ही हो चुकी थी, किन्तु उसका प्रकाशन 9 वर्ष बाद 1890 में हुआ था, अतः इस उपन्यास को उक्त उपन्यासों के ही काल–क्रम में रखना उचित है।'निस्हाय हिन्दू' का प्रकाशन देर से 1890 में होने पर भी इसका कथा पुस्तक के लिए लेखक ने उपन्यास शब्द का प्रयोग नहीं किया। 1888 में प्रकाशित ठाकुर जगमोहन सिंह कृत श्यामा–स्वप्नके मुखपृष्ठ पर हिन्दी में लिखे गए गद्य प्रधान चार खण्डों में एक वंदना और अंग्रेजी (रोमन अक्षरों)येंएन ओरिजिनल नॉवेल इन हिन्दी प्रोजशब्दावली से स्पष्ट हैं कि इस प्रकार की विशिष्ट कथा–पुस्तकों के लिए 1875 में उपन्यास पद प्रयुक्त किए जाने पर भी बहुत बाद तक इस प्रकार की अपनी कला पुस्तकों के लिए यह पद प्रयुक्त नहीं किया गया, विशेषतया भारतेन्दुमण्डल के बाहर के लेखकों के द्वारा।

पंडित गौरीदत्त ने भी देवरानी जेठानी की कहानी के विषय में स्पष्ट किया है, मैंने इस कहानी को नए रंग ढंग से लिखा है, भले ही इन लेखकों ने अपनी कथा–पुस्तकों को उपन्यास नहीं कहा, पर उन्हें इनके नयेपनका बोध था जिसकी उन्होंने घोषणा भी की थी। बाद में ये सभी .तियां उपन्यास के रूप में ही प्रतिष्ठित हुई है।

प्रोफेसर गोपाल राय लिखते हैं "1913 ईस्वी में खत्री जी के देहावसान के बाद हिन्दी में हुई पाठक वर्ग की असाधारण वृद्धि ने प्रेमचन्द्र को 1915 ईस्वी में लाने का श्रेय, परोक्ष रूप से, देवकीनंदन खत्री को भी है। खत्री जी ने पाठक वर्ग के निर्माण के रूप में आवश्यक जमीन तैयार कर दी जिस पर प्रेमचन्द्र ने उपन्यास की समृद्ध फसल उगाने में सफलता प्राप्त की। प्रोफेसर राय के अनुसार "खत्री जी का अनुकरण उनके जीवनकाल में ही आरम्भ हो गया था। उनके उपन्यासों की लोकप्रियता से प्रेरित होकर हर.ष्ण जौहर, मदन मोहन पाठक, बालमुकुन्द वर्मा ,किशोरी लाल गोस्वामी, विनायक लाल भद्र, रूपनारायण शर्मा, कुंवर लक्ष्मीनारायण गुप्त, विश्वेश्वर प्रसाद वर्मा, ठाकुर जंग बहादुर सिंह, शंकर दयाल श्रीवास्तव, रामलाल वर्मा, वृंदावन बिहारी सिंह, ब्रह्मदत्त शर्मा, चन्द्रशेखर पाठक, गोविंदराव तेलंग, जगन्नाथ मिश्र, रूपकिशोर जैन आदि लेखकों ने 1894–1983 ई. अवधि में दर्जनों ऐयारी–तिलिस्म प्रधान रोमांसों की रचना की और खत्री जी के निधन के बाद भी यह क्रम जारी रहा। किन्तु इनको खत्री जी जैसी लोकप्रियता प्राप्त नहीं हो पाई।

देवकीनंदन खत्री के समकालीन उपन्यासकारों में किशोरी लाल गोस्वामी और गोपाल राम, गहमरी मेहता,लज्जाराम शर्मा तथा ब्रजनन्दन सहाय का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। किशोरी लाल गोस्वामी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के सम्पर्क और उन्हीं की प्रेरणा से साहित्यकर्म में प्रवृत्त हुए थे। उन्होंने विभिन्न विधाओं में लगभग डेढ़ सौ पुस्तकें लिखी थी। जिनमें 65 उपन्यास थे। इन्होंने उपन्यास नामक मासिक पत्र का सम्पादन किया था।"वैसे तो उन्होंने अपने युग में प्रचलित और विकसित उपन्यास के प्रायः हर रूप पर अपना हाथ आजमाया। सामाजिक, तिलस्मी और जासूसी लेकिन उनकी मुख्य पहचान एक ऐतिहासिक उपन्यास लेखक की ही बनी और आगे भी बनी है"। प्रणयिणीपरिणय(1890) ह्रदयहारिणी का आदर्श, रमणी (1890),

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

लवंगलता का आदर्श बाला (1890), तारा का छात्रन्कुल कमलिनी (1902), सुल्ताना रजिया बेगम व रंग महल में हकाहल (1904), पुनर्जन्म व सौतिहा डाह(1907), सोना और सुगन्ध व पन्नाबाई (1911), गुलबहार वा भातृस्नेह (1916), लखन की कब्र व शाही महल शिरा (1917) और अंगूठी का नगीना (1918) इनके प्रमुख उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में पुनर्जन्म व सौतिहा डाह (1907) तथा अंगूठी का नगीना (1918) उनके प्रसिद्ध सामाजिक उपन्यास हैं।

निष्कर्ष– सारतः, जिन कथा–पुस्तकों का उल्लेख किया गया है वे यथार्थ की प्रति आग्रह और समसामयिक यथार्थ के चित्रण के कारण ही उपन्यास की श्रेणी में आती है और यह तत्वउन्हें कहानी से पृथक करता है।उपर्युक्त सभी उपन्यासों में तत्कालीन समसामयिक यथार्थ प्रस्फुटित हुआ है। उन सब का काल पुनर्जागरण का काल है जिसका सब पर पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। जैसे–जैसे कालक्रमानुसार इन उपन्यासों का प्रणयन हुआ वैसे ही उनमें निखार आता गया। धीरे–धीरे उपन्यासों में प्रेम और रोमांस का भी प्रवेश होने लगा, जिसका पूर्ण परिपाक देवकीनन्दन खत्री के उपन्यासों चन्द्रकान्ता और चन्द्रकान्ता सन्तति में देखने को मिलता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं, ''..... हिंदी साहित्य के इतिहास में बाबू देवकीनन्दन का स्मरण इस बात के लिए सदा बना रहेगा कि जितने पाठक उन्होंने उत्पन्न किये उतने और किसी ग्रन्थकार ने नहीं। चन्दकान्ता पढ़ने के लिए ना जाने कितने उर्दू जीवी लोगों ने हिन्दी सीखी। चन्द्रकांता पढ़ चुकने पर वे चन्द्रकान्ता के किस्म की कोई किताब ढूंढने में परेशान रहते थे। शुरु–शुरु में चन्दकांता और चन्द्रकांता सन्तति पढ़कर ना जाने कितने नवयुवक हिंदी के लेखक हो गए। इसकी लोकप्रियता को देखकर बाबू देवकीनंदन खत्री ने 1907 में 'भूतनाथ' नामक एक असाधारण ऐय्यर पात्र पर आधारित 'भूतनाथ' नायक उपन्यास लिखना प्रारंभ किया, जिसे 1915 ईस्वी में मृत्यु हो जाने के कारण पर पूरा ना कर सके। इसे उनके पुत्र दुर्गा प्रसाद खत्री ने 1915 और 1935 के बीच पूरा किया।

यद्यपि बाबू देवकीनंदन खत्री के तिलिस्म और ऐयारी वाले उपन्यास मुख्यतः कल्पना –प्रसूत होने के कारण यथार्थवादी रुझान के प्रति उदासीन है, तथापि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि राज्यों, यहां तक कि छोटी रियासतों में भी, गुप्तचरो या जासूसों, जिन्हें देवकीनंदन खत्री ने ऐयार कहा है, की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इन उपन्यासों का मुख्य प्रतिपाद्य तो प्रेम–कहानी अथवा रोमांस ही रहा है, किंतु तिलिस्म की रहस्यमई कल्पना तथा ऐयारों का बुद्धि चातुर्य निश्चित रूप से एक चमत्कार पैदा करता है, जिसके कारण ये कथा–पुस्तकें साहित्य की कोटि में आ जाती है। इन कथा पुस्तकों में वर्णित नौगढ़ तथा विजयगढ़ आदि स्थान वास्तविक है, और पहाड़ियों, जंगलों खण्डहरों तथा प्रकृति के विभिन्न रूपों का चित्रण लेखक के निजी तौर पर देखे गए दृश्यों पर आधारित है। जैसा कि मधुरेश जी कहते हैं,''इन उपन्यासों में सनातन हिन्दू आदर्शों का आग्रह बहुत स्पष्ट है। कभी–कभी तो सीधे लेखक के हस्तक्षेप के रूप में भी उसे देखा जा सकता है।

यह भी उल्लेखनीय है–भारतेन्दु कालीन तथा पूर्व प्रेमचन्द्र कालीन उपन्यासों में सम सामयिक यथार्थ का चित्रण हुआ है और इसी कारण उनकी गणना उपन्यास विधा में की गई है। इस काल में समसामयिक यथार्थ का चित्रण उपन्यास का एक अनिवार्य लक्षण बन चुका था।

अनेक विद्वानों की मान्यता है कि प्रेमचन्द्र के उपन्यास भारतेन्दु युगीन उपन्यासों की ही अगली और विकसित कड़ी है। प्रेमचंद्र के पूर्व श्रीनिवासदास, बाल.ष्ण भट्ट और राधाकृष्ण दास ने उपन्यास को मनोरंजन के स्तर से ऊपर उठाया था और उपन्यास विधा का पूर्ण विकास प्रेमचन्द ने किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोपाल राय , 2019, पृश्ठ – 48.
2. मधुरेश, 2018, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. रामविलास शर्मा, प्रेमचन्द्र और उनका युग।
4. अरोरा, ज्ञानवती,: समकालीन हिन्दी कहानी यथार्थ के विविध आयाम, हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 1994.
5. सिंह त्रिभुवन : हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1955.
6. मो.सानू : काशीनाथ सिंह, साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ, अलीगढ़ मुस्लिम वि.वि. शोध ग्रंथ, 2016.
7. श्रीवास्तव परमानन्द : कहानी की रचना प्रक्रिया, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2012.
8. गोपालराय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन।

*****